International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

ठुमरी गायन शैली का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. अंजना रानी

एसोसिएट प्रोफेसर, संगीत गायन, राजकीय महिला महाविद्यालय, करनाल

Abstract:
Bhartiye Sangeet ke Itihas me Thumri Gayan shaili ka Apna ek vishes Mahatva raha h .yeh Upshasyriye Sangeet ke Antargat lane Wali Gayan Vidha hai.Thumri ek Bhav Pradhan Gayan Shaili h.Kathak Nritye ke sath Iska vishes sambandh hai.

भारतीय संगीत के इतिहास में गायन शैलियों का अपना एक विशेष महत्व रहा है। रूढ़िवादी बंधनों से मुक्त, लोकरुचियों की संवेदनाओं ने ठुमरी गायन को जन्म दिया। ठुमरी के जन्म के विषय में विद्वानों के विभिन्न मत रहे हैं पर निश्चित है कि ठुमरी, मध्यकालीन युग से संगीत में अपना स्थान बनाती आ रही है। आज हिंदुस्तानी संगीत की गायन शैलियों में ठुमरी गायकी एक विशेष विधा के रूप में अत्यंत लोकप्रिय हुई है।

कुछ विद्वानों के अनुसार ठुमरी 'ठुम' और 'रि' दो शब्दों से मिलकर बना है। ठुम शब्द ठुमकत चाल अर्थात राधा जी की चाल और रि शब्द रिझावत अर्थात भगवान कृष्ण के मन को रिझाने की ओर इंगित करता है। इस प्रकार ठुमरी लय और रिझाना का घोतक होने के कारण लयकारी और भावाभीव्यंजना दोनों की अभिव्यक्ति है।(1)

ठुमरी उपशास्त्रीय गायन के अंतर्गत आने वाली गायन विधा है क्योंकि इसमें राग बंधन इतना कठोर नहीं होता जितना ध्रुपद और ख्याल इत्यादि में होता है। किसी राग विशेष को आधार मानकर भाव प्रदर्शन हेतु अन्य रागों को भी बीच-बीच में दर्शाना ठुमरी का स्वभाव है। ठुमरी एक भाव प्रधान गायन शैली है, इसी कारण ठुमरी गायकी में सुरीली लोचदार आवाज के साथ छोटी-छोटी मुर्कियां एवं स्वरों को इच्छानुसार प्रस्तुत करने की क्षमता होनी आवश्यक है। ठुमरी में 'शब्द' और 'स्वर' के संयोजन से काव्य में निहित भाव को सफलता से प्रदर्शित करने के लिए विशिष्ट रागों को उपयुक्त माना जाता है जैसे पीलू, काफी, मांड, रवमाज ,जोगिया, पहाड़ी,तिलंग, देस, इत्यादि।(2)

शास्त्रीय संगीत और लोक संगीत का मिश्रण तथा श्रृंगार रस की प्रधानता ठुमरी की एक विशेषता है। नृत्य के साथ संबंध होने के कारण भाव प्रदर्शन के लिए ठुमरी में बंदिश के बोलों का अधिक महत्व रहा है।(3)

ठुमरी की प्रकृति सरल और स्वच्छंद होने के कारण, इसमें भाषा नियमों की कठोरता नहीं होती। आजकल ठुमरी का जो रूप हमारे सामने है उसमें साधारण तथा ब्रज भाषा, अवधी, उर्दू का प्रभाव परिलक्षित होता है।(4) मूलत: ठुमरी शब्द की उत्पत्ति ब्रजभाषा से हुई मानी जाती है। इसीलिए ब्रज क्षेत्र की श्रृंगारमय कृष्णलीला और कथक नृत्य से ठुमरी का ऐतिहासिक संबंध जोड़ा जाता है।(5)

नृत्य से संबंधित होने के कारण और राग नियमों की अवहेलना होने पर 20वीं शताब्दी के प्रारंभ तक ध्रुपद और ख्याल के स्वाभिमानी संगीतज्ञ, ठुमरी को घृणा की दृष्टि से देखते थे। परंतु धीरे-धीरे ठुमरी की मधुरता तथा कलात्मकता के कारण अनेक उच्चकोटि के संगीतज्ञों ने इसे अपनाया और संगीत सभाओं में प्रतिष्ठत किया। भारतीय संगीत में ठुमरी शब्द प्राय: 400 वर्षों से प्रचलित है परंतु उस समय ठुमरी गायन का प्रयोग, नृत्य गीतों के साथ ही किया जाता था।अतःधीरे-धीरे समय के साथ-साथ जब विकास के क्रम में यह विधा कथक नृत्य से अलग हुई तो एक स्वतंत्र गायन शैली के रूप में उभर कर सामने आई।ऐसा माना जाता है कि आधुनिक ठुमरी का विकास अवध के दरबार में हुआ,उस समय राज दरबार अपनी विलासिता और कलात्मकता के लिए प्रसिद्ध थे।लखनऊ के नवाब वाजिद अली खां उच्च कोटि के रसिक एवं नृत्यकार थे।उनके दरबार में राधा कृष्ण की संयोग वियोग से संबंधित कई ठुमरी गीतों की रचना हुई,अतःठुमकने के भाव के कारण इसका नाम ठुमरी रखा गया होगा। वाजिद अली शाह को ठुमरी का आविष्कारक भी कहा जाने लगा। कुछ विद्वानों के अनुसार लखनऊ के उस्ताद सादिक अली खां, ठुमरी के अन्वेषक माने जाते हैं।अतःयह स्पष्ट है कि ठुमरी का संबंध लखनऊ से ही है, जहां यह कला के रूप में विकसित हुई।(6)

पंडित भातखंडे जी कहते हैं कि लखनऊ और बनारस, ठुमरी के लिए प्रसिद्ध है। लखनऊ में ठाकुर नवाब अली खां और बनारस में मोती बाई को भैया गणपत राव की परंपरा का प्रतीक कहा जाना चाहिए। कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार ठुमरी को नृत्य की अपेक्षा, एक विशिष्ट स्वर रचना द्वारा प्रस्तुत करने में भैया गणपत और मौजुद्दीन का योगदान रहा है। तभी से ठुमरी एक विशिष्ट ज्ञान विधा के रूप में विकसित होकर जन मानस में प्रचलित व लोकप्रिय हुई। (7)

पहले जिस ठुमरी की महफिले सजती थी, आज ख्याल गायन के बाद ठुमरी गायन की रसात्मक प्रस्तुति की लोकप्रियता है। आज ठुमरी का इतना तो विकास हुआ है कि यह विधा कोठे से निकलकर बड़े-बड़े संगीतज्ञों की महफिलों व सभाओं में प्रतिष्ठत होने लगी है।(8)

किसी जमाने में ठुमरी का रिश्ता नृत्य कला से माना जाता था।उस समय ठुमरी के प्रदर्शन में बोलबनाव अर्थात् बंदिश के शब्दों के स्वरलगाव के माध्यम से भावों की अभिव्यक्ति को अधिक महत्व दिया जाता था।(9)इस प्रकार नृत्य से संबंधित होने के कारण ठुमरी को नृत्य गीत भी कहा जाने लगा।नृत्य के साथ गीत का संबंध अति प्राचीनकाल से लेकर आज तक चला आ रहा है।वेद,रामायण,महाभारत,कालिदास के नाटकों तथा उसके बाद लिखित अन्य ग्रंथो में नृत्य गीतों के उदाहरण प्राप्त होते हैं।परंतु सभी प्रकार के नृत्यों के साथ प्रयुक्त गीतों को ठुमरी के अंतर्गत नहीं रखा जा सकता। ठुमरी का घनिष्ठ संबंध कथक नृत्य के साथ गाए जाने वाले गीतों की परंपरा से है।(10)

आज का कथक नृत्य, श्रृंगार रस प्रधान श्रेणी का नृत्य है ठुमरी गायन के साथ, कथक नृत्य शैली में भावाभिनय प्रदर्शन की परंपरा रही है।अतः ठुमरी गायन और कथक नृत्य, एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से संबंधित रहे हैं।(11)

नृत्य के साथ ठुमरी में भाव प्रदर्शन करने में कथक नृत्यकार महाराज बिंदादीन के भतीजे, स्वर्गीय शंभू महाराज और उनके बड़े भाई लच्छूमहाराज, बिरजू महाराज व मुंबई की सितारा देवी का योगदान ठुमरी के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।(12)

विद्वानों के अनुसार कालांतर में ठुमरी दो प्रमुख भेदों में विभक्त हो गई है—

(i) बोलबांट की ठुमरी (ii) **बोलबनाव की ठुमरी**

बोलबांट की ठुमरी :-- इस ठुमरी में लयकारी का काम अधिक था परंतु कथक नृत्य से अलग होने के बाद जब ठुमरी गायन को स्वतंत्र रूप प्रदान हुआ, तो यह मध्य लय के ख्याल गायन के समान थी और तीन ताल में निबध्द होती थी। बोलबांट की ठुमरियां कुछ गंभीर प्रकृति के रागों को छोड़कर; अन्य सभी रागों में गाई जाती थी, धीरे-धीरे समय के साथ-साथ बोलबांट की ठुमरी के रूप में परिवर्तन हुआ और ठुमरी मध्य तीन ताल के साथ-साथ, द्रुत तीन ताल में भी गाई जाने लगी और इसमें खटका, मुर्कियों और टप्पा अंग की तानों का समावेश हुआ। वर्तमान काल में ठुमरी तीनताल के अतिरिक्त कहरवा, दादरा तालों में भी गाई जाने लगी है।(13)

बोल बनाव की ठुमरी :---इस ठुमरी में को वर्तमान काल में सर्वाधिक मान्यता प्राप्त है। इसमें बंदिश के बोल के साथ, भाव प्रदर्शन की भी महता है। बोल बनाव के लिए विलंबित लय अधिक उपयुक्त होने से ठुमरी गायन का प्रचार विलंबित लय में होने लगा है। इसमें विलंबित जत ताल और दीपचंदी ताल का अधिकांश प्रयोग होता है। विलंबित ठुमरी को साधारण चार भागों में विभाजित किया जा सकता है। पहले भाग को पकड़ कहते हैं दूसरे भाग में स्वर विस्तार व बंदिश की स्थाई गाई जाती है तीसरे भाग में बहलावे की चाल होती है। इसमें छोटी-छोटी तानें, बोल तानें, सपाट तानें , जमजमा इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। अंतरा गाने के बाद अंतिम भाग का गायन होता है जिसको दुगुन कहा जाता है।(14)

इस प्रकार ठुमरी के दो भेदों का विचार करने से यह पता चलता है की ठुमरी के दो भेदों में पहला गतिप्रधान तथा दूसरा भावप्रधान है। बोलबांट की ठुमरीयों में बंदिश की रचना का चमत्कार सर्वाधिक महत्वपूर्ण होने से इसे बंदिश की ठुमरी भी कहा जाता है। बोलबनाव की ठुमरी का प्रचलन पूर्वी उत्तर प्रदेश में बिहार की ओर अधिक है इसीलिए इसे प्राय: पूर्व अंग की ठुमरी भी कहते हैं।

ठुमरी के विकास के फलस्वरूप तीन प्रमुख शैलियों सामने आती है- लखनऊ, बनारस और पंजाब की ठुमरियां । लखनऊ में बोलबांट की ठुमरी अर्थात बंदिश की ठुमरी प्रचलित है तो बनारस में बोल बनाव की ठुमरी की प्रधानता होती है। इस ठुमरी को वर्तमान में पूरब अंग की ठुमरी भी कहा जाता है पंजाब अंग की ठुमरी के प्रवर्तक उस्ताद बड़े गुलाम अली खां को माना जाता है इन्होंने बनारस अर्थात पूर्व अंग की ठुमरी को लोक संगीत का रंग देते हुए पंजाब अंग की नई शैली विकसित की।

इस प्रकार 19वीं शताब्दी के अंत तक ठुमरी गायन इतना अधिक लोकप्रिय हुआ कि इसे घरानेदार लोग उच्च श्रेणी के ध्रुपद व ख्याल गायको ने भी गाना प्रारंभ किया। उस्ताद फैयाज खां, रामपुर के उस्ताद हुसैन खां , मुंबई के अब्दुल करीम खां एवं लाहौर के बड़े गुलाम अली खां, सभी ने ठुमरी गायन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। पंडित भास्कर बुवा, शास्त्रीय संगीत के साथ-साथ ठुमरी गाने के लिए भी प्रसिद्ध थे। बड़े गुलाम अली खान ने ठुमरी की एक विशिष्ट शैली का आविष्कार किया, जिसे पंजाब अंग की ठुमरी के नाम से जाना जाता है। किराना घराने के अब्दुल करीम खान की गाई ठुमरीयों में, भैरवी राग की ठुमरी “जमुना के तीर”, पीलू राग में “सोच समझ नादान” , जोगिया राग में “पिया मिलन की आस” अत्यधिक लोकप्रिय है। पंजाब अंग के ठुमरी गायको मे पाकिस्तान के सलामत अली व नजाकत अली के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। पटियाला घराने के उस्ताद अब्दुल रहमान खान और उनकी शिष्य श्रीमती निर्मला अरुण और श्रीमती लक्ष्मी शंकर ठुमरी गायन में काफी प्रसिद्ध रही है। ललनपिया का नाम भी प्रसिद्ध ठुमरी गायको में लिया जाता है। इसके अतिरिक्त पूरब अंग की ठुमरी के वर्तमान कलाकारों में गिरिजा देवी, सविता देवी तथा छन्नू लाल मिश्र इत्यादि के नाम उल्लेखनीय है।(15)

इस प्रकार ठुमरी के लोकप्रियता को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि ठुमरी भावप्रधान गीत शैली है। जिसमें बोलबनाव ही उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति मानी गई है।

ठुमरी को उपशास्त्रीय संगीत की श्रेणी में भी इसलिए रखा गया है क्योंकि इसमें राग नियमों का कठोरता से पालन करना आवश्यक नहीं है, गायक कलाकार अपनी इच्छा से भिन्न-भिन्न रागों का मिश्रण करके, अपने संगीत कौशल से स्वर, लय, ताल से सजी विशिष्ट रचना का प्रदर्शन करता है।इसी परिप्रेक्ष्य मेंउत्तरप्रदेश, पंजाब और बिहार की ठुमरियां, आज उपशास्त्रीय संगीत का सफल प्रतिनिधित्व करती है। लखनऊ की नजाकत, पंजाब की सफलता, बनारस की चैनदारी यह सब ठुमरियां अलग-अलग रुची वाले श्रोताओं को आकर्षित करती है।
वर्तमान युग में जनसमाज में ठुमरी की लोकप्रियता काफी बढ़ गई है। आज संगीत सभाओं में ठुमरी का प्रदर्शन, कार्यक्रम के बाद, एक छोटी रसात्मक शैली के रूप में किया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण, प्रो० स्वतंत्र शर्मा, पृष्ठ 385
2. हिंदुस्तानी शास्त्रीय गायन की शिक्षा प्रणाली, श्री सुरेश गोपाल श्रीखंडे, पृष्ठ 45
3. ठुमरी की उत्पत्ति विकास और शैलियां, डॉक्टर शत्रुघन शुक्ल, पृष्ठ 139
4. भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण, प्रोफेसर स्वतंत्र शर्मा, पृष्ठ 389
5. भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण, प्रोफेसर स्वतंत्र शर्मा, पृष्ठ 385
6. भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विश्लेषण, प्रोफेसर स्वतंत्र शर्मा, पृष्ठ 385-386
7. संगीत चिंतामणि द्वितीय खंड, सुमित्रा कुमारी, सुलोचना बृहस्पति, पृष्ठ 214
8. भा० स० एक एति० विश्लेषण, पृष्ठ 386
9. सुस्वराली, डॉ0 नीलिमा छापेकर, पृष्ठ 131
10. भारतीय कंठ संगीत और वाद्य संगीत, डॉ0 अरुण मिश्रा, पृष्ठ 95
11. ठुमरी की उत्पत्ति विकास और शैलियों, पृष्ठ 36
12. भा० स० एक एति० विश्लेषण, पृष्ठ 389
13. ठुमरी परिचय, श्रीमती लीला कारवाल, पृष्ठ 20
14. भारतीय कंठ संगीत वाद्य संगीत, डॉ0 अरुण मिश्रा, पृष्ठ 101-102
15. भा० स० एक एति० विश्लेषण, पृष्ठ 388-389